त्रितापदग्ध हुए बिना सुखपूर्वक रह सकेंगे और देहान्त हो जाने पर भगवद्धाम में प्रविष्ट हो जायेंगे। यह मायाबद्ध जीव के लिए भगवान् की पूरी योजना है। यज्ञ के द्वारा बद्धजीव उत्तरोत्तर कृष्णभावनाभावित होकर सब प्रकार से देवोपम बन जाते हैं। वर्तमान कलियुग के युगधर्म के रूप में वेदों में 'संकीर्तन यज्ञ' का विधान है। अतएव इस युग के सब जीवों का उद्धार करने हेतु श्रीचैतन्य महाप्रभु ने इस अलौकिक पद्धति का प्रवर्तन किया। वस्तुतः संकीर्तन यज्ञ और कृष्णभावना का युगल बड़ा सुन्दर है। श्रीमद्भागवत में संकीर्तनयज्ञ के विशिष्ट सन्दर्भ में भगवान् श्रीकृष्ण के भक्तरूप (श्रीचैतन्य महाप्रभु) का वर्णन है—

कृष्णवर्णं त्विषाकृष्णं सांगोपांगास्त्रपार्षदम्।
यज्ञैः संकीर्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः।।

"कलियुग में यथार्थ बुद्धिमान् मनुष्य संकीर्तनयज्ञ के द्वारा पार्षदों सहित भगवान् श्रीगौरहरि की आराधना करते हैं।" (श्रीमद्भागवत ११.५.२९) इस कलियुग में अन्य किसी वैदिक यज्ञ का संपादन सम्भव नहीं रहा है। परन्तु संकीर्तनयज्ञ तो आज भी सर्वभीष्ट-सिद्धि के लिए अतिशय सुगम और प्रभविष्णु (उदात्त) है।

5/3

देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ।।११।।

देवान्=देवताओं को; **भावयत**=प्रसन्न करो; **अनेन**=इस यज्ञ के द्वारा; **ते**=वे; **देवाः**=देवता; **भावयन्तु**=प्रसन्न करेंगे; **वः**=तुम्हें; **परस्परम्**=परस्पर, **भावयन्तः**=एक दूसरे को प्रसन्न करते हुए; **श्रेयः**=कल्याण को; **परम्**=परम; **अवाप्स्यथ**=प्राप्त करोगे।

अनुवाद

यज्ञों से प्रसन्न होकर देवता तुम्हें भी प्रसन्न करेंगे। इस प्रकार परस्पर एक-दूसरे के पोषण से सर्वत्र सबके लिए समृद्धि हो जायगी।।११।।

तात्पर्य

देवता संसार के शक्ति-निक्षिप्त प्रशासक हैं। जीवमात्र को देह धारण करने के लिए वायु, जल, प्रकाशादि तत्त्वों की आवश्यकता है। इनकी आपूर्ति का उत्तरदायित्व देवताओं पर है। ये असंख्य देवता विराट् भगवत् विग्रह के अंग-प्रत्यंग में अवस्थित भगवत्सेवक हैं। उनकी प्रसन्नता तथा अप्रसन्नता मनुष्य के यज्ञ करने पर निर्भर है। यद्यपि कुछ यज्ञ विशेष देवताओं को प्रसन्न करने के लिए किये जाते हैं, तथापि सभी यज्ञों में मुख्य भोक्ता के रूप में भगवान् विष्णु की ही आराधना सम्पन्न होती है। स्वयं भगवद्गीता में कहा है कि स्वयं श्रीकृष्ण सम्पूर्ण यज्ञों के भोक्ता हैं—**भोक्तारं यज्ञ तपसाम्।** अतएव अन्त में 'यज्ञपति' का सन्तोष सब 'यज्ञों' का मुख्य प्रयोजन है। इन यज्ञों का भलीभाँति संपादन होने पर विविध संभरण विभागों के अध्यक्ष देवता अपने-आप प्रसन्न हो जाते हैं; फिर किसी भी प्राकृतिक पदार्थ का अभाव नहीं रहता।